13 इंद्रप्रस्थ

0751CH13

द्रौपदी के स्वयंवर में जो कुछ हुआ था, उसकी खबर जब हस्तिनापुर पहुँची, तो विदुर बड़े खुश हुए। धृतराष्ट्र के पास दौड़े गए और बोले–"पांडव अभी जीवित हैं। राजा द्रुपद की कन्या को स्वयंवर में अर्जुन ने प्राप्त किया है। पाँचों भाइयों ने विधिपूर्वक द्रौपदी के साथ ब्याह कर लिया है और कुंती के साथ वे सब द्रुपद के यहाँ कुशल से हैं।"

यह सुनकर धृतराष्ट्र हर्ष प्रकट करते हुए बोले–"भाई विदुर! तुम्हारी बातों से मुझे असीम आनंद हो रहा है। राजा द्रुपद की बेटी हमारी बहू बन गई है, यह बड़ा ही अच्छा हुआ।"

उधर दुर्योधन को जब मालूम हुआ कि पांडवों ने लाख के घर की भीषण आग से किसी तरह बचकर और एक बरस तक कहीं छिपे रहने के बाद अब पराक्रमी पांचालराज की कन्या से ब्याह कर लिया है और अब वे पहले से भी अधिक शक्तिशाली बन गए हैं, तो उनके प्रति उसके मन में ईर्ष्या की आग और अधिक प्रबल हो उठी। दबा हुआ वैर फिर से जाग उठा। दुर्योधन और दुःशासन ने शकुनि को अपना दुखड़ा सुनाया–"मामा, अब क्या करें? अब तो द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न और शिखंडी भी उनके साथी बन गए हैं।"

उसके बाद कर्ण और दुर्योधन धृतराष्ट्र के पास गए और एकांत में उनसे दुर्योधन ने कहा–"पिता जी, जल्दी ही हम ऐसा कोई उपाय करें, जिससे हम सदा के लिए निश्‍चिंत हो सकें।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "बेटा, तुम बिलकुल ठीक कहते हो। तुम्हीं बताओ, अब क्या करना चाहिए?"

दुर्योधन ने कहा, "तो फिर हमें कोई ऐसा उपाय करना चाहिए, जिससे पांडव यहाँ आएँ ही

नहीं, क्योंकि यदि वे इधर आए, तो ज़रूर राज्य पर भी अपना अधिकार जमाना चाहेंगे।"

इस पर कर्ण को हँसी आ गई। उसने कहा—"दुर्योधन! अब एक साल बाहर रहने और दुनिया देख लेने से उन्हें काफ़ी अनुभव प्राप्त हो चुका है। एक शक्ति संपन्न राजा के यहाँ उन्होंने शरण ली है। तिस पर उनके प्रति तुम्हारा वैरभाव उनसे छिपा नहीं है। इसलिए छल-प्रपंच से अब काम नहीं बनेगा। आपस में फूट डालकर भी उनको हराना संभव नहीं। राजा द्रुपद धन के प्रलोभन में पड़नेवाले व्यक्ति भी नहीं हैं। लालच देकर उनको अपने पक्ष में करने का विचार बेकार है। पांडवों का साथ वे कभी नहीं छोड़ेंगे। द्रौपदी के मन में पांडवों के प्रति घृणा पैदा हो ही नहीं सकती। ऐसे विचार की ओर ध्यान देना भी ठीक नहीं है। हमारे पास केवल एक ही उपाय रह गया है और वह यह है कि पांडवों की ताकत बढ़ने से पहले उन पर हमला कर दिया जाए।" कर्ण तथा अपने बेटों की परस्पर विरोधी बातें सुनकर धृतराष्ट्र इस बारे में कोई निर्णय नहीं ले सके। वे पितामह भीष्म तथा आचार्य द्रोण को बुलाकर उनसे सलाह-मशविरा करने लगे। पांडु-पुत्रों के जीवित रहने की खबर पाकर पितामह भीष्म के मन में भी आनंद की लहरें उठ रही थीं।

भीष्म ने कहा—"बेटा! वीर पांडवों के साथ संधि करके आधा राज्य उन्हें दे देना ही उचित है।" आचार्य द्रोण ने भी यही सलाह दी। अंग-नरेश कर्ण भी इस अवसर पर धृतराष्ट्र के दरबार में उपस्थित था। पांडवों को आधा राज्य देने की सलाह उसे बिलकुल अच्छी न लगी। दुर्योधन के प्रति कर्ण के हृदय में अपार स्नेह था। इस कारण द्रोणाचार्य की सलाह सुनकर उसके क्रोध की सीमा न रही। वह धृतराष्ट्र से बोला—"राजन्! मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हो रहा है कि आचार्य द्रोण भी आपको ऐसी कुमंत्रणा देते हैं! राजन्! शासकों का कर्तव्य है कि मंत्रणा देनेवालों की नीयत को पहले परख लें, फिर उनकी मंत्रणा पर ध्यान दें।" कर्ण की इन बातों से द्रोणाचार्य क्रोधित हो गरजकर बोले—"दुष्ट कर्ण! तुम राजा को गलत रास्ता बता रहे हो। यह निश्चित है कि यदि राजा धृतराष्ट्र ने मेरी तथा पितामह भीष्म की सलाह न मानी और तुम जैसों की सलाह पर चले, तो फिर कौरवों का नाश होनेवाला है।"

इसके बाद धृतराष्ट्र ने धर्मात्मा विदुर से सलाह ली। विदुर ने कहा—"हमारे कुल के नायक भीष्म तथा आचार्य द्रोण ने जो बताया है, वही श्रेयस्कर है। कर्ण की सलाह किसी काम की नहीं है।"

अंत में सब सोच-विचारकर धृतराष्ट्र ने पांडु के पुत्रों को आधा राज्य देकर संधि कर लेने का निश्चय किया और पांडवों को द्रौपदी तथा कुंती सहित सादर लिवा लाने के लिए विदुर को पांचाल देश भेजा। विदुर पांचाल देश को रवाना हो गए। पांचाल देश में पहुँचकर विदुर ने राजा द्रुपद को अमूल्य उपहार भेंट करके उनका सम्मान किया और राजा धृतराष्ट्र की तरफ़ से अनुरोध किया कि पांडवों को द्रौपदी सहित हस्तिनापुर जाने की अनुमति दें। विदुर का अनुरोध सुनकर राजा द्रुपद के मन में शंका हुई। उनको धृतराष्ट्र पर विश्वास न हुआ। सिर्फ़ इतना कह दिया कि पांडवों की जैसी इच्छा हो, वही करना ठीक होगा। तब विदुर ने माता कुंती के पास

जाकर अपने आने का कारण उन्हें बताया। कुंती के मन में भी शंका हुई कि कहीं पुत्रों पर फिर कोई आफ़त न आ जाए।

विदुर ने उन्हें समझाया और धीरज देते हुए कहा–"देवी, आप निश्‍चिंत रहें। आपके बेटों का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा। वे संसार में खूब यश कमाएँगे और विशाल राज्य के स्वामी बनेंगे। आप सब बेखटके हस्तिनापुर चलिए।"

आखिर द्रुपद राजा ने भी अनुमति दे दी और विदुर के साथ कुंती और द्रौपदी समेत पांडव हस्तिनापुर को रवाना हो गए।

उधर हस्तिनापुर में पांडवों के स्वागत की बड़ी धूमधाम से तैयारियाँ होने लगीं। जैसाकि पहले ही निश्चय हो चुका था, युधिष्ठिर का यथाविधि राज्याभिषेक हुआ और आधा राज्य पांडवों के अधीन किया गया। राज्याभिषेक के उपरांत युधिष्ठिर को आशीर्वाद देते हुए धृतराष्ट्र ने कहा–"बेटा युधिष्ठिर! मेरे अपने बेटे बड़े दुरात्मा हैं। एक साथ रहने से संभव है कि तुम लोगों के बीच वैर बढ़े। इस कारण मेरी सलाह है कि तुम खांडवप्रस्थ को अपनी राजधानी बना लेना और वहीं से राज करना। खांडवप्रस्थ वह नगरी है, जो पुरु, नहुष एवं ययाति जैसे हमारे प्रतापी पूर्वजों की राजधानी रही है। हमारे वंश की पुरानी राजधानी खांडवप्रस्थ को फिर से बसाने का यश और श्रेय तुम्हीं को प्राप्त हो।"

धृतराष्ट्र के मीठे वचन मानकर पांडवों ने खांडवप्रस्थ के भग्नावशेषों पर, जोकि उस समय तक निर्जन वन बन चुका था, निपुण शिल्पकारों से एक नए नगर का निर्माण कराया। सुंदर भवनों, अभेद्य दुर्गों आदि से सुशोभित उस नगर का नाम इंद्रप्रस्थ रखा गया। इंद्रप्रस्थ की शान एवं सुंदरता ऐसी हो गई कि सारा संसार उसकी प्रशंसा करते न थकता था। अपनी राजधानी में द्रौपदी और माता कुंती के साथ पाँचों पांडव तेईस बरस तक सुखपूर्वक जीवन बिताते हुए न्यायपूर्वक राज्य करते रहे।